पेरिस
अप्रील १४, २००७

सन्देश संख्या ११७

वाराणसी गंगा

पवित्र गंगा नदी उत्तर में हिमालय से अपनी यात्रा प्रारम्भ करती है तथा दक्षिण में हिन्द महासागर में मिल जाती है । पवित्र तीर्थ–नगर वाराणसी गंगा–तट पर उसके प्रवाह के उस भाग में अवस्थित है जहाँ गंगा अपने प्रवाह–मार्ग की दिशा में अकस्मात पूर्ण परिवर्तन कर लेती है और उत्तर में हिमालय की तरफ अर्थात् अपने मूल की ओर बहने लगती है । आन्तरिक समझदारी का विज्ञान जिसमें ''मै'' भ्रांति है, के प्रति यह एक निमन्त्रण है । भ्रांति में फँसे लोग इसे समझ नहीं पाते । उनमें से कुछ इस पवित्र नदी में स्नान करने बार–बार आते हैं, कुछ एक–दो बार आते हैं और फिर कभी नहीं आते और कुछ अपने स्वार्थपूर्त्ति हेतु अपनी सुविधानुसार कभी–कभी आते रहते हैं । किन्तु अन्तर्यात्रा की महत्ता तथा समस्त मानसिक पंजीकरणों का समूह ही भ्रांति ''मैं'' है, को इनमें से कोई भी नहीं समझता ।

शिवेन्दु के पास कई लोग केवल उसकी निन्दा करने आते हैं । कुछ लोगों को यहाँ खुश करने वाले तथा सुरक्षा प्रदान करने वाले आश्वासन नहीं मिलने पर, सदमा लग जाता है और वे फिर कभी नहीं आते । कुछ लोग फिर भी बार–बार आते रहते हैं, यह सोचकर कि शायद किसी दिन उनको कुछ लाभ मिल जाय । किन्तु जिन्हें विभेदकारी चित्तवृत्ति के प्रदूषण से रहित वास्तविक समझदारी का स्पर्श प्राप्त हो जाता है, केवल वे ही समझदारी की इस ऊर्जा की साझेदारी में शिवेन्दु के साथ वर्षों तक रह पाते हैं । यह समूह यद्यपि बहुत छोटा है किन्तु पर्याप्त बड़ा है । अत्यधिक स्याटीका दर्द, शल्य क्रिया, स्वास्थ्य लाभ हेतु आराम की आवश्यकता, कई अन्य उपचार आदि की गम्भीर बाधाओं के बावजूद शिवेन्दु की विश्व–यात्रा, इसी समूह की देख–रेख में निर्बाध होती है। और इस तरह, ''जो है'' को देख पाने की ज्वाला फैल रही है तथा ''ऐसा होना चाहिए'' रूपी कामना का कूड़ा–ककट जलकर भस्मीभूत हो रहा है ।

कभी नहीं सुधरने वाले कुछ मूर्ख मस्तिष्क भी यहाँ बार–बार आते रहते हैं । उन्हें अच्छी तरह जानते हुए भी शिवेन्दु कभी–कभी उनकी मूर्खता को प्रकाशित कर देता है ताकि आत्मछवि के बन्धन से सूक्ष्मरूपेण एवं गहराई में आवृत्त भ्रांति का उन्हें पता चल जाय जो उनकी समझदारी एवं स्वतंत्रता को अवरुद्ध किए हुए है । किन्तु तब उनकी वास्तविकता बाहर आ जाती है । वे पागलों की तरह चिल्लाने लगते हैं : ''शिवेन्दु सत्य के नाम पर केवल दूसरों की निन्दा एवं उनकी बातों का खण्डन करते हैं जिससे कई लोगों को चोट पहुँचती है और इसीलिए वे पुनः नहीं आते ।'' वे पुनः नहीं आयें और अपने पाखण्ड एवं धोखा की दुनिया में ही बने रहें । शिवेन्दु कोई राजनीतिज्ञ नहीं है जो बड़ी संख्या में लोगों के समर्थन की लालसा रखता है । वह लोगों को कुछ विश्वास दिलाने हेतु किसी की तरफ से कोई प्रचार नहीं कर रहा है । शिवेन्दु का कोई दृष्टिकोण नहीं है । अतः किसी दूसरे के दृष्टिकोण को स्वीकारने या अस्वीकारने का प्रश्न ही नहीं है । इस प्रकार की मूर्खता यदि शिवेन्दु के बारें में, योग के बारे में, क्रिया एवं उसकी शिक्षा के बारे में तथा किसी भी चीज के बारे में अच्छे एवं बुरे विचारों में आनन्द लेती है तो लेने दिया जाय ।

यह सन्देश फ्रांस के एक पुराने भक्त के पत्र का उत्तर है । उनका पत्र एक माह से भी ज्यादा समय बाद अभी–अभी प्राप्त हुआ, क्योंकि शिवेन्दु स्पेन में यात्रा कर रहा था तथा वहाँ लोगों की अवधारणाओं को ध्वस्त कर उनमें विस्फोट कर रहा था । ईश्वर को धन्यवाद है कि वे जीवन में समझदार और संवेदनशील (न कि मूर्ख और भावुक मन वाले) हैं । उन लोगों ने अगले वर्ष स्पेन में दो माह के कार्यक्रम हेतु निवेदन किया है, इस वर्ष एक–माह का कार्यक्रम था।

शिवेन्दु के इस पुराने मित्र के लिए यह सही समय है कि वे क्रिया–शिक्षा से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लें । वे अपनी मानसिक अवधारणाओं में ही प्रसन्न रहें । वे अन्तहीन विचारों की सहायता से भ्रांति ''मैं'' का पुनर्निमाण करते रहें। कई लोगों ने शिवेन्दु को छोड़ दिया है तो वे भी उस संख्या में एक और वृद्धि कर लें । जितना शीघ्र हो उतना ही अच्छा । शिवेन्दु के शरीर से निकला प्रेम भी शिव (निर्मन) की अग्नि (रूद्र) है । मन को अपने विभाजनों को मजबूती प्रदान करने हेतु शीघ्रातिशीघ्र इस अग्नि से दूर भाग जाना चाहिए नहीं तो वह भस्मीभूत हो जाएगा और यह भस्म ही शिव का सर्वाधिक प्रिय सौन्दर्य प्रसाधन है ।

।। जय अग्नि ।।